P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

डा.भीमराव अम्बेडकर का सामाजिक चिंतन

राजश्री सेठी
सहायक आचार्य,
इतिहास विभाग,
मा.ला.व.राज.महाविद्यालय,
भीलवाड़ा, राजस्थान

सारांश

20वी. सदी में डा. भीमराव अम्बेडकर ने सामाजिक धार्मिक जागृति का बीड़ा उठाया और इसी के तहत समाज के उपेक्षित वर्गो को न्याय दिलाने का कार्य प्रारंभ किया। डा. अम्बेडकर के समाज सुधार कार्यों का केन्द्र मुख्यतः शूद्र, अतिशूद्रो के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने, महिला शिक्षा के प्रचार–प्रसार, भारतीय समाज में विषमता और गैर बराबरी के नैसर्गिक अधिकारों की रक्षा करने सम्बंधी प्रयास थे। उनका ये मानना था कि सुधार के लिए स्वंय प्रयास करने होगें और इसके लिए सबसे आवश्यक शिक्षा को माना। उनका ये मानना था कि शिक्षा द्वारा ही तार्किक दृष्टिकोण का विकास हो सकता है। वे एक ऐसी सामाजिक सरंचना चाहते थे। जिसमें धर्म, व्यक्ति, सामजिक प्रजातंत्र, राजनैतिक प्रजातंत्र और राज्य समाजवाद आदि की भूमिका महत्वपूर्ण हो।

मुख्य शब्द : शूद्र, जाति व्यवस्था, समानता, सामाजिक समन्वय।

प्रस्तावना

20 वीं सदी के महानतम चिंतकों की पंक्ति में डा. भीमराव अम्बेडकर का अग्रणीय स्थान है। जाति उन्मूलन डा. अम्बेडकर का सबसे सशक्त संदेश है। डा. अम्बेडकर का यह मानना था कि भारतीय संदर्भ में सामाजिक सुधार की राह 'स्वर्ग की राह' की तरह कठिनाईयों से भरी है। भारत में राष्ट्रीय आन्दोलन की दो धाराएं थी। राजनीतिक सुधारकों का मानना था कि 'स्वराज' सामाजिक सुधार से पहले आना चाहिए। समाजवादी मानते थे कि राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तन से ही सामाजिक समस्याएं दूर हो जाएगी। अम्बेडकर साहेब ने माना कि समाज पुर्नरचना के संदर्भ में राजनीतिक सुधार, समाज सुधार के ऊपर प्राथमिकता नहीं पा सकते। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि इतिहास यह सिद्ध करता है कि राजनीतिक क्रांति हमेशा सामाजिक एवं धार्मिक क्रांतियों के बाद होती है। उन्होंने यूरोप में धर्म सुधार एवं पैगम्बर मौहम्मद द्वारा शुरू की गई धार्मिक क्रांति और भारत के बुद्ध एवं गुरूनानक की क्रांतियों का उदाहरण दिया।

अम्बेडकर का सामाजिक चिंतन इन्हीं छ. बिन्दुओं के चारों तरफ परिभ्रमित होता प्रतीत होता है। अम्बेडकर की विभिन्न रचनाओं विशेष रूप से 'कास्टस इन इंडिया (1977), एनिहिलेशन ऑफ कास्ट (1937), हु वेयर द शुद्राज (1946), द अनटचेबुल्स (1948) तथा द रिडल्स ऑफ हिंदुइज्म' का अध्ययन करें तो हम पाते हैं कि उन्होंने ऐतिहासिक तथ्यों का वैज्ञानिक विश्लेषण कर सामाजिक अन्याय के कारणों को ढूंढने की कोशिश की ताकि उसका सही निदान ढूंढा जा सके।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र में डा. भीमराव अम्बेडकर के सामाजिक विचारों का संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत किया है और उनके विचारों के समाज व धर्म पर पड़ने वाले प्रभावों को इंगित किया है। समकालीन समाज सुधारकों से अम्बेडकर के विचार किस प्रकार भिन्नता लिए थे इसका स्पष्ट वर्णन प्रस्तुत शोध पत्र में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

शोध विधि

उपर्युक्त शोध पत्र हेतु आंकड़ो का सकंलन प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोत के माध्यम से प्राप्त किया गया है। प्राथमिक स्त्रोतो में डा. भीमराव अम्बेडकर द्वारा रचित रचनाओं, उनके भाषणों, व्याख्यानों द्वारा उद्वेलित विचारों को आधार बनाया गया है। वहीं द्वितीयक स्त्रोतों में विभिन्न विद्वानों द्वारा डा. भीमराव अम्बेडकर पर रचित साहित्य एवं पत्रिकाओं में प्रकाशित तथ्यों का सकंलन किया गया है।

साहित्यावलोकन

एनहीलेशन ऑफ कास्ट

डॉ. अम्बेडकर द्वारा रचित श्रेष्ठतम ग्रंथों में से यह एक है इसका प्रकाशन 1936 में किया गया। इसमें तत्कालीन जाति व्यवस्था एवं धार्मिक नेताओं

का घोर विरोध किया गया। इसमें जात–पात तोड़क मण्डल के लाहौर सम्मेलन हेतु डॉ. अम्बेडकर के भाषण का विस्तार से वर्णन है।

वॉट कांग्रेस एण्ड गांधी हेव डन टू दी अनटचेबिल्स

अम्बेडकर द्वारा रचित यह पुस्तक 1945 में प्रकाशित हुई इसमें तात्कालीन रूप से प्रभावी कांग्रेस दल एवं गांधी जी के दलितों के प्रति विचारों व अम्बेडकर के उनसे मतभेदों को स्पष्ट किया गया।

स्टेट एण्ड माईनॉरिटीज

अम्बेडकर द्वारा ही रचित इस पुस्तक में भारतीय संविधान में वर्णित प्रस्तावना, मूल अधिकार, अल्पसंख्यकों के अधिकार,अनुसूचित जातियों के लिए किए गए प्रावधान आदि का वर्णन है।

हू वर द शूद्राज

डॉ. अम्बेडकर ने प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन कर इस पुस्तक में यह स्पष्ट किया कि शूद्र कौन थे, उन्होंने बताया कि वे पहले क्षत्रिय थे। शूद्र लोग राज्य कर्ता थे। सुदास, पुरूरव आदि शूद्र क्षत्रिय राजा थे। क्षत्रिय और ब्राह्मणों में वैर भाव था इसीलिए ब्राह्मणों ने क्षत्रियों को कपट पूर्वक शूद्र बना दिया।

डॉ. अम्बेडकर चिंतन और विचार

डॉ. राजेन्द्र मोहन भट्नागर द्वारा लिखित एवं 1994 में प्रकाशित इस पुस्तक में अम्बेडकर के विचारों को बहुत खुबसूरती से पेश किया गया है।

आधुनिक भारत के डॉ. अम्बेडकर

डब्ल्यू एन कुबेर द्वारा रचित इस पुस्तक में डॉ. अम्बेडकर के आधुनिक भारत में योगदान को स्पष्ट किया गया है। इसका प्रकाशन वर्ष 1991 है।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : संस्मरण और स्मृतियां

नानकचन्द रत्तु द्वारा रचित इस ग्रंथ में डॉ. अम्बेडकर की स्मृतियों का सुन्दर वर्णन किया गया है। इसका तृतीय संस्करण 2012 में प्रकाशित हुआ।

भारतीय नारी के उद्धारक 'डॉ. बी.आर. अम्बेडकर'

डॉ. कुसूम लता मेघवाल द्वारा रचित इस पुस्तक में डॉ. अम्बेडकर के महिलाओं के प्रति विचारों का वर्णन है। इसका तृतीय संस्करण 2010 में प्रकाशित हुआ।

मानवाधिकारों के पुरोधा 'डॉ. बी.आर. अम्बेडकर'

डॉ. धर्मकीर्ति द्वारा रचित इस पुस्तक में डॉ. अम्बेडकर के विचार, उनका संघर्ष और संविधान में किये गये प्रावधानों का वर्णन है। इसका प्रकाशन वर्ष 2013 है।

क्रान्ति प्रतीक अम्बेडकर

थॉमस मैथ्यू द्वारा रचित इस पुस्तक का प्रकाशन 2012 में हुआ। यह पुस्तक डॉ. अम्बेडकर के सैद्धान्तिक एवं राजनैतिक योगदानों का समग्र वर्णन प्रस्तुत करती है साथ ही उनके द्वारा विभिन्न कालों में संचालित व्यवहारिक संघर्षों का सार भी प्रस्तुत करती है।

डॉ. अम्बेडकर, गांधी और दलित

एस. एस. गौतम के द्वारा रचित इस पुस्तक का प्रकाशन 2015 में हुआ। यह पुस्तक डॉ. अम्बेडकर और गांधी के दलितों के प्रति क्या विचार थे नामक विषय पर लिखी गई है।

अम्बेडकर के सामाजिक चिन्तन के मुख्य बिन्दु निम्न थे –

1. दलित एवं शोषित वर्गो की उत्पत्ति के सामाजिक ऐतिहासिक कारणों कि खोज।
2. अछूतों का शोषण एवं सवर्णो के हितों का पोषण करने वाली परम्परात्मक सामाजिक संरचना एवं उसके निर्णायक सिद्धान्तों का वैज्ञानिक परीक्षण।
3. परम्परागत सामाजिक ढांचे को पोषित करने वाले विचारों की तर्कसंगत वैज्ञानिक समीक्षा।
4. लोकतांत्रिक सामाजिक ढांचे वे संबंधों के निर्णायक सिद्धान्तों का निरूपण।

अम्बेडकर ने एक ऐसी सामाजिक सरंचना की कल्पना की। जिसके आधारभूत तत्व है – धर्म, व्यक्ति, सामाजिक प्रजातंत्र, राजनैतिक प्रजातंत्र और राज्य समाजवाद। सामाजिक सरंचना के हिन्दू अर्थात् परम्परात्मक भारतीय प्रारूप एवं अम्बेडकरीय प्रारूप में प्रमुख भिन्नता यह है कि, पहली का केन्द्रबिंदु जाति है तथा दूसरी का लक्ष्य बिंदु व्यक्ति है। व्यक्ति अम्बेडकरवादी सामाजिक सरंचना की वह इकाई है जो सरंचना के आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक आदि तत्वों का निर्माण करती है। प्रतिफल के रूप में ये सरंचनात्मक तत्व आगे चलकर व्यक्ति की निरंतरता, भरण पोषण, सुरक्षा तथा विकास की आवश्यक व्यवस्था करते है। अम्बेडकर वैयक्तिक स्वतंत्रता के पक्षधर थे। उनका यह मानना था कि पानी की बूंद जिस प्रकार सागर में मिलकर अपना अस्तित्व खो देती है, व्यक्ति उस प्रकार समाज में अपना अस्तित्व नहीं खोता। उसका जीवन स्वतंत्र है। व्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए अम्बेडकर ने संविधान में मौलिक अधिकारों का प्रावधान किया।

अम्बेडकर का यह मानना था कि यदि हमें नवीन विचार एवं मूल्यों को लाना है तो पुराने प्रचलित जातिगत कार्यो के स्थान पर नवीन नामों का चलन प्रारंभ करना होगा। अम्बेडकर ने गीता के इस कथन को स्वीकार नहीं किया जिसमें कहा गया है कि 'चातुर्वर्ण्य मया सृष्टं गुणकर्म विभागज्ञः तस्य कर्तारमपि मां विद्वयकर्ता रमण्यम्।' अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णों का समूह गुण और कर्मों के विभागपूर्वक मेरे द्वारा रचा गया है। इस प्रकार इस सृष्टि रचनादि कर्म का कर्ता होने पर भी मुक्त अविनाशी परमेश्वर को तु वास्तव में अकर्ता ही जान।[1] इसी को वर्ण व्यवस्था का मूलाधार माना गया जिसका उन्होंने सशक्त खण्डन किया। उनका यह भी मानना था कि सामाजिक अन्याय का कोई भी अन्य उदाहरण मनुसंहिता की तुलना में फीका लगेगा।[2] सवर्णो में शूद्रों को जान–बूझकर सामाजिक अधिकारों से वंचित रखा ताकि वे अपने विरूद्ध हो रहे न्याय का प्रतिकार न कर सके।[3] चातुर्वण्य की अवधारणा प्रतिपालक और संरक्षक की सरंचना पर आधारित है। अम्बेडकर का मानना था कि वास्तविक रूप से यह सम्बंध मालिक और गुलाम का है। ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य भले ही अपने आपसी सम्बन्धों से खुश न हों, लेकिन समझौते के आधार पर काम कर लेते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रियों को खुश रखते है और दोनों मिलकर वैश्यों को आराम से जीने देते हैं, ताकि अपनी आजीविका उस पर चला सके। लेकिन तीनों शूद्रों का दमन करने पर सहमत हो गये हैं। शूद्र को

सम्पत्ति का अधिकार नहीं दिया अन्यथा वह तीनों वर्णो के चंगुल से छूट जाएगा। शिक्षा का अधिकार इसलिए नहीं दिया ताकि वह अपने हितों के लिए जागरूक न हो सके। वह अपने अधिकारों के लिए कहीं विद्रोह न कर दें इसलिए उसे शस्त्र ज्ञान से वंचित रखा। दुनिया के दूसरे देशों में सामाजिक क्रांतिया हुई है, परन्तु भारत में इसका उदाहरण नहीं मिलता। क्योंकि हिन्दूओं की निम्न जातियाँ चातुर्वण्य व्यवस्था के कारण पूरी तरह अक्षम हो गई है। इसीलिए उनका मानना था कि 'जातिप्रथा ने भारतीय समाज की रीढ़ की हड्डी तोड़ डाली है। वर्ण व्यवस्था सबसे गिरी हुई व्यवस्था है, जो मानव का विनाश करती है।'[4]

जाति की नींव शास्त्रों से है। डॉ. अम्बेडकर द्वारा जाति व्यवस्था के हानिकारक प्रभाव निम्नलिखित शब्दों में दर्शायें गये हैं "जाति मनुष्य को संवेदनहीन बनाती है, यह बांझपन की एक प्रक्रिया है। शिक्षा, सम्पत्ति एवं श्रम प्रत्येक व्यक्ति के लिए, जो कि स्वतंत्र एवं पूर्ण मनुष्यत्व प्राप्त करना चाहता है, आवश्यक है। कुछ वर्गो को शिक्षा और धन एवं दूसरों को श्रम तक सीमित कर देने से हिन्दू दर्शन ने समाज को संवेदनहीन बना दिया है। समाज का पिछड़ापन एवं आलस प्रकृति को दोष मुख्यतः अप्राकृतिक एवं अवैज्ञानिक सामाजिक व्यवस्था को दिया जा सकता है।" [5]

जाति पाति तोड़क मण्डल, लाहौर में दिये गये अपने भाषण में उन्होंने निम्न बिन्दूओं पर जोर दिया। [6]

1. जाति भेद हिन्दुओं के विनाश का उत्तरदायी है।
2. हिन्दु समाज का पुर्नगठन चार वर्णो के आधार पर करना संभव नही है।
3. हिन्दु समाज को स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के आधार पर बनी धार्मिक भावना के सहारे संगठित करना चाहिए
4. वर्ण और जाति भेद का बंधन समाप्त करने के लिए आवश्यक है कि शास्त्रों को भगवत वाक्य मानना छोड़ दिया जाये।

डॉ. अम्बेडकर समाज के हांसिये पर स्थित निम्न वर्ग को न्याय दिलाने के लिए कृत संकल्प थे। वे इस बात से भली भांति अवगत थे कि समाज में किसी प्रकार का आंदोलन चलाने के लिए उस वर्ग विशेष को संगठित करने की आवश्यकता होती है। इसी उद्देश्य से 9 मार्च 1927 को 'बहिष्कृत हितकारीणी सभा' के गठन का प्रस्ताव पारित किया और 'पढ़िए, संगठित रहिये और आंदोलन कीजिए' का उद्घोष किया गया।[7] वर्ण व्यवस्था को ईश्वरीय व पवित्र माना गया है इसीलिए जाति व्यवस्था का उन्मूलन नहीं हो पाया। धार्मिक शास्त्रों के प्रति पवित्रता की भावना नष्ट की जाये, क्योंकि हिन्दुओं के कर्म एवं व्यवहार उनकी धार्मिक अवधारणाओं के ही परिणाम है, हिन्दू अपने व्यवहार को उस समय तक नहीं बदल सकते, जब तक शास्त्रों के पवित्रता के भाव का अन्त नहीं किया जायेगा, क्योंकि उनका व्यवहार उनके धार्मिक ग्रंथों पर आधारित है।[8] सामाजिक लोकतंत्र का अर्थ स्पष्ट करते हुए 25 नवम्बर, 1946 को संविधान सभा में कहा कि, सामाजिक लोकतंत्र का अर्थ है जीवन की पद्धति। ऐसी पद्धति जिसमें जीवन का सिद्धान्त स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व होता है।'[9] अम्बेडकर जातिवाद एवं वर्णव्यवस्था पर आधारित किसी भी समाज को न्यायोचित नहीं मानते थे। वह एक नवीन समाज व्यवस्था की स्थापना करना चाहते थे जिसके मूलतत्व स्वतंत्रता, समानता एवं भ्रातृत्व हो।

स्वतंत्रता

अम्बेडकर ने स्वतंत्र भ्रमण, जीवन और सम्पति के अर्थ में स्वतंत्रता को आवश्यक माना। उन्होंने निजी सम्पति के अधिकार का भी समर्थन किया। अपने नये समाज में अम्बेडकर ने धार्मिक स्वतंत्रता को भी आवश्यक माना। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी धर्म को अपनाने, उसका प्रचार करने एवं धार्मिक संस्थाएं निर्मित करने का अधिकार होना चाहिए। राजनीतिक स्वतंत्रता के तहत मताधिकार का प्रयोग करने, संगठित होने, प्रचार तथा अभिव्यक्ति, दल बनाने एवं चुनाव लड़ने आदि के अधिकार का समर्थन किया। उनके अनुसार, 'यदि व्यक्तियों की शक्तियों को प्रभावशाली ढंग से उपयोग में लाया जाए तो निश्चय ही स्वतंत्रता का अधिकार लाभदायक सिद्ध होगा।'[10] अम्बेडकर ने स्वतंत्रता व समानता को निरपेक्ष न मानकर सापेक्ष माना है एवं उनका यह मानना भी था कि यदि सभी जातियां अपने सब भेदभाव समाप्त कर एक वर्ण या जाति में रूपान्तरित होती है, जिसे जातिविहीन, वर्गविहीन समाज की रचना प्रक्रिया कहा जा सकता है तो ऐसा होने के साथ समाज में अन्याय और भेदभाव का खात्मा स्वतः ही हो जाएगा।[11] एक आदर्श समाज में दूसरों से सम्पर्को के लिए विभिन्न एवं स्वतंत्र सम्पर्क स्थल होने चाहिए। दूसरे शब्दों में सामाजिक आदान–प्रदान होना चाहिए।

समानता

अम्बेडकर समता के सिद्धान्त को वैचारिक एवं व्यवहारिक दोनों रूपों में महत्व देते है। ''उन्होंने स्वीकार किया है कि सभी मनुष्य मानसिक और शारीरिक शक्ति में समान नहीं होते, किन्तु फिर भी उन्होंने वैचारिक और व्यवहारिक आधार पर समता का प्रतिपादन किया है। अम्बेडकर ने स्पष्ट किया कि,''जहाँ तक व्यक्तिगत प्रयत्नों का सम्बंध है, उनको भिन्न अथवा असमान माना जा सकता है, किन्तु लोगों को अपनी व्यक्तिगत प्रतिभा एवं शक्ति को प्रदर्शित करने का अवसर तो दिया जाना चाहिए ताकि वे अपने को प्रगतिशील बना ले और समाज में कुछ योगदान कर सके।[12] व्यक्तिगत रूप में एक मनुष्य और दूसरे मनुष्य में अन्तर को स्वीकार करते हुए भी अम्बेडकर ने 'अवसर की समानता' की बात कही। किन्तु साथ ही उन्होंने यह भी माना कि चयन हमेशा योग्यता के आधार पर ही होना चाहिये अन्यथा सामाजिक स्वतंत्रता एवं मानवता के लिए घोर अन्याय होगा। उन्होंने प्राथमिकता युक्त समता की बात कही, कि वे लोग जो बिना सुविधाओं के आगे नही बढ़ सकते, उन्हें आवश्यक रूप से सुविधाएँ दी जानी चाहिए। ऐसा कार्य न्याय तथा निष्पक्षता से किया जाये तो, बहुत अच्छा होगा।[13] जाति समानता के साथ ही डॉ. अम्बेडकर नर और नारी के समान अधिकारों की भी बात करते हैं। उनका कहना था कि 'मैं समाज की उन्नति का अनुमान इस बात से लगाता हूँ कि उस समाज की महिलाओं की कितनी प्रगति हुई

है। नारी की उन्नति के बिना समाज एवं राष्ट्र की उन्नति असंभव है।' इस उन्नति का आधार उन्होंने शिक्षा को माना। उन्होंने कहा था कि नारी शिक्षा पुरूष शिक्षा से भी अधिक आवश्यक है क्योंकि स्त्री राष्ट्र के भावी निर्माताओं का निर्माण करने की महत्ती भूमिका निभाती है किन्तु मनु जैसे स्मृतिकारों ने नारी को मूक पशु की तरह रखने के लिए उन्हें शिक्षा से वंचित रखने की राष्ट्रघाती नीति अपनाई। [14]

भ्रातृत्व

अम्बेडकर की आदर्श समाज व्यवस्था का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है भ्रातृत्व। भ्रातृत्व का अर्थ है समाज के सभी के बीच भाईचारे की भावना। यही सिद्धान्त सामाजिक जीवन में एकता और संगठन स्थापित करना है। उन्हीं के शब्दों में आदर्श समाज प्रगतिशील होना चाहिए। उसमे ऐसी भरपूर सारणियां होनी चाहिए कि वह समाज के एक हिस्से में हुए परिवर्तन की सूचना अन्य हिस्सों को दे दे।' दूसरे शब्दों में समाज के भीतर सम्पर्क को सर्वत्र होना चाहिए। इसी को भ्रातृत्व कहा जाता है। यह प्रजातंत्र को दूसरा नाम है[15], क्योंकि भ्रातृत्व के होने पर ही समाज में सभी व्यक्तियों एवं वर्गो का आपस में सम्मिश्रण संभव होता है।

अम्बेडकर के अनुसार एक आदर्श समाज में स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व तीनों का होना जरूरी है।

सामाजिक न्याय

समाज में न्याय का होना अति आवश्यक है। व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिये न्याय महत्वपूर्ण आधार है। सामाजिक न्याय से तात्पर्य 'समाज के सभी व्यक्तियों का अपने अस्तित्व को बनाये रखने एवं विकास के लिये अवसरों की समानता से है। अम्बेडकर सामाजिक न्याय के अग्रदूत थे। उन्होंने प्रो. बर्गवान की न्याय की विवेचना से प्रेरित होकर विचार व्यक्त किए कि 'न्याय का सिद्धान्त सागर्भित है और अधिकांशतः उन सभी सिद्धान्तों को भी सम्मिलित करता है जो एक नैतिक व्यवस्था की आधारशिला बना चुके है। न्याय ने सदैव समानता एवं क्षतिपूर्ति के समानुपात के विचारों को जागृत किया है। समदृष्टि समानता की ओर संकेत करती है। नियम तथा संकेत (संयम) सही एवं सदाचरण का मूल्य में समानता से सम्बन्ध होता है। यदि सभी आदमी समान है तो सभी मनुष्य एक ही सारतत्व के है और वह समान सार तत्व उन्हें समान मौलिक अधिकारों और समान स्वतंत्रता का अधिकारी बनाता है।'[16] अम्बेडकर साामाजिक न्याय के भौतिक स्वरूप में विश्वास न करके उसे समाज के नैतिक मूल्यों का आधार बनाना चाहते थे ताकि सम्पूर्ण राष्ट्र जाँति–पाँति के बन्धन से मुक्त होकर विकास की दिशा में आगे बढ़ सके।

अम्बेडकर के आदर्श समाज के आधारभूत तत्वों में एक तत्व है व्यक्ति और समाज का अनवरत सम्बन्ध। अर्थात व्यक्ति व समाज का आपसी सम्बन्ध कैसा हो, इनमें किसकी प्रधानता रहे ? ये दोनो पृथक है या जुड़े हुए ? दोनों में से कौन उच्च व कौन भिन्न ? उनके अनुसार व्यक्ति सामाजिक नियम व बन्धनों का दास नहीं है, अपितु ये नियम व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के लिए होते है और व्यक्ति ही सामाजिक सम्बंधों का स्रोत है। अपने सामाजिक दर्शन में, वे मनुष्य को समाज का मौलिक तत्व मानते हैं न कि एक बिल्कुल ही स्वतंत्र इकाई, हांलाकि मनुष्य में बुद्धि है, साथ ही वह एक विवेकशील प्राणी है जो अच्छे सहयोगी सम्बन्धों पर आधारित एक मानवीय समाज का निर्माण करता है।[17] इस प्रकार अम्बेडकर ने व्यक्ति व समाज के सम्बन्धों को स्पष्ट करते हुए दोनों के समग्र सम्बंध पर जोर दिया।

सामाजिक समन्वय

अम्बेडकर का सामाजिक दर्शन सामाजिक समन्वय का पाठ पढ़ाता है। उनका यह मानना था कि व्यक्ति को समाज के नियमों व आदर्शों का पालन करना चाहिए परन्तु वे समाज नियमों के अन्ध भक्त बनने के भी विरोधी थे। उनके अनुसार 'आदर्श या नियम अच्छे और आवश्यक होते है। न कोई समाज और न कोई व्यक्ति आदर्श के बिना कुछ कर सकता है।'[18] परन्तु इन आदर्शों का समय व परिस्थितियों के अनुसार मूल्यांकन होना आवश्यक है ताकि उनमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन किए जा सके। इसीलिए अम्बेडकर ने कहा था कि समाज में यथार्थ व आदर्श में उचित तालमेल आवश्यक है। यथार्थ को आदर्श बनाना और फिर उस आदर्श को प्राप्ति का प्रयास सामाजिक न्याय नहीं अपितु अन्याय है। उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि अम्बेडकर ने अपने चिन्तन में सामाजिक समन्वय पर बल दिया।

सामाजिक नैतिकता

समाज के विभिन्न घटकों में एक महत्वपूर्ण घटक सामाजिक नैतिकता है। आवश्यकता इस बात कि है कि समाज के सामान्य नैतिक नियम हो जो सभी वर्गो व जातियों पर समानता के आधार पर लागु हो। अम्बेडकर का मत था कि यह तभी संभव है जब नैतिकता को पवित्र समझकर समाज में मान्यता दी जाए। यहां पवित्रता से तात्पर्य सार्वभौमिकता है न कि कोई दैवीय वस्तु। जब कोई विश्वास या नियम पवित्र बन जाता है तो वह अकाट्य होता है उसका प्रतिकार नहीं किया जा सकता। ऐसी पवित्रता में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता क्योंकि यह ईश्वर के समकक्ष होती है। अतः यह स्पष्ट है कि यदि नैतिकता को पवित्रता का दर्जा मिल जाए तो समाज उससे आवश्यक रूप से लाभान्वित होगा।

सामाजिक परिवर्तन की पद्धति

परिवर्तन समय का नियम है। अम्बेडकर हिंसात्मक विधि के पक्ष में नहीं थे। उनका यह विचार था कि 'नवीन समाज में हिंसा, घृणा और वैमनस्य का कोई स्थान नहीं होना चाहिए। आधुनिक समय में हिंसा से परिवर्तन लाना बौद्धिक दृष्टि से विपरीत है। शक्ति और अनावश्यक दबाव का प्रयोग करना धर्म विरूद्ध है, शांतिमय ढंग ही सबसे उत्तम पद्धति है।'[19]

निष्कर्ष

इस प्रकार हम पाते है कि अम्बेडकर का सामाजिक चिंतन, भारतीय समाज की विषमता, जाँति–पाँति की असमानता व अस्पृश्यों के मानवाधिकारों के हनन आदि विविध शोषण के स्वरूपों एवं उनके पीछे स्थित कारणों की खोज से प्रारम्भ होकर स्वतंत्रता, समानता व भ्रातृत्व पर आधारित न्यायपूर्ण समाज की स्थापना पर खत्म होता है। उन्होंने समाज को केन्द्र में

रखकर मानव के विभिन्न पक्षों की समस्याओं को न केवल रेखांकित किया अपितु उनके सर्वाग्राह्य समाधान भी प्रस्तुत किए। उन्होंने भारतीय समाज में व्याप्त धर्मान्धता, जातिभेद, छुआछूत को समाज के विकास में अवरोधक माना तथा वर्णव्यवस्था में व्याप्त असमानता को भारत में बढ़ती गरीबी का मूल कारण निरूपित किया। उनका मत था, ''सारी प्रजा को समान हक है, सभी के लिए समान कानून लागू होने चाहिए उसमें जाति भेद के नाम पर कम ज्यादा सजा ऐसा अन्याय नहीं होना चाहिए।''[20] वे समाज के प्रत्येक व्यक्ति की आजादी के पक्षधर थे। और इसकी झलक उनके नेतृत्व में निर्मित भारतीय संविधान में मिलती है। 26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान को आत्मर्पित करते हुए कहा था – ''हम भारत के सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समानता आदि के अधिकार देने की घोषणा करते हैं। लेकिन जिस समाज की रूपरेखा उन्होंने बनाई उसे वे साक्षात रूप में नहीं देख पाये। 31 जुलाई 1956 के अपने अंतिम संदेश में उन्होंने कहा कि "मै अपने जीवन का लक्ष्य पूरा नहीं कर पाया। मैं अपने लोगों को दूसरे समुदायों के साथ बराबरी के आधार पर राजनीतिक सत्ता में भागीदारी करने वाले शासक वर्ग के रूप में देखना चाहता था। [21] इस बात से उनका दुख स्पष्ट होता है। आज से सभी नागरिकों को इन अधिकारों को समान रूप से पाने का अधिकार हो गया है।'' अम्बेडकर विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। उनका सामाजिक चिन्तन का दृष्टिकोण शास्त्रीय व व्यवहारिक दोनों ही दृष्टिकोण से अद्भुत था। वर्तमान परिदृश्य में जहाँ हम 'वसुदेव कुटुम्बकम' का विचार लेकर प्रगति की ओर अग्रसर है, वैश्वीकरण के समतामूलक मानवीय विकास के दृष्टिकोण से अम्बेडकर का सामाजिक दर्शन वर्तमान में भी उपयोगी व वांछित है।

सन्दभ ग्रंथ सूची

1. *भगवत गीता, अध्याय 4,13*
2. *डा.बी.आर. अम्बेडकर–एनहीलेशन ऑफ कॉस्ट, थैकंर एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1937 पृ. 48*
3. *डा.बी.आर.अम्बेडकर–एनहीलेशन ऑफ कॉस्ट, थैकंर एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1937 पृ. 47*
4. *डा. राजेन्द्र मोहन भटनागर– डा. अम्बेडकर चिन्तन और विचार, जगतराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1994, पृ. 29*
5. *मैथ्यू थॉमस, क्रांति प्रतीक आम्बेडकर, सम्यक प्रकाशन, 2012 पृ.16*
6. *गौतम एस.एस., डॉ. अम्बेडकर, गांधी और दलित, गौतम बुक सेन्टर, 2015 पृ.71*
7. *डॉ. धर्म कीर्ति, मानवाधिकारों के पुरोधा 'डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, सम्यक प्रकाशन 2013 पृ.147*
8. *डा. बी. आर. अम्बेडकर–एनहीलेशन ऑफ कॉस्ट, थैकंर एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1937 पृ. 8*
9. *संविधान सभा वाद विवाद, खण्ड–1 पृ. 80–81*
10. *डा.बी.आर. अम्बेडकर–एनहीलेशन ऑफ कॉस्ट, थैकर एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1936 पृ. 27–28*
11. *डा. बी.आर.अम्बेडकर–एनहीलेशन ऑफ कॉस्ट, थैकंर एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1936 पृ. 49*
12. *डा.बी.आर. अम्बेडकर–व्हॉट कांग्रेस एण्ड गांधी हैव डन टू द अन्टचेबिल्स, थैंकर एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1946, पृ. 137*
13. *डा बी.आर. अम्बेडकर–स्टैट एण्ड माइनरटिज, थैकंर एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1947*
14. *मेघवाल डॉ. कुसूम, भारतीय नारी के उद्धारक, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, सम्यक प्रकाशन, 2010 पृ.101*
15. *भगवानदास (सकं) दस स्पोक अम्बेडकर (वाल्युम–2) बुद्धिस्ट पब्लिशिंग हाउस, जालंधर, 1968*
16. *भारत में सामाजिक न्याय, पृ.190*
17. *डा. बी. आर. अम्बेडकर – हु वर द शूद्राज, थैंकर एण्ड कम्पनी, बम्बई 1946 पृ. 14*
18. *डा. बी.आर. अम्बेडकर – हु वर द शूद्राज, थैंकर एण्ड कम्पनी, बम्बई 1946 पृ. 14*
19. *अग्रवाल, श्याम मोहनःगांधी एवं अम्बेडकर राजनीतिक एवं सामाजिक चिन्तन, रितु पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1998, पृ. 183*
20. *कुबेर, डब्ल्यू.एन., आधुनिक भारत के निर्माता डा. अम्बेडकर, दिल्ली, 1991, पृ.13*
21. *रत्तु, नानकचंद, बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर, संस्मरण और स्मृतियां, सम्यक प्रकाशन, 2012 पृ.232*